

राजस्थान उच्च न्यायालय की जयपुर पीठ के लिए

एसबी सिविल रिट याचिका संख्या 6410/2014

राकेश चौहान पुत्र श्री हरि सिंह चौहान, उम्र लगभग 22 वर्ष, निवासी प्लॉट नंबर 1158, संजय नगर कच्ची बस्ती, डीसीएम अजमेर रोड, जयपुर-

---याचिकाकर्ता

बनाम

1. जयपुर विद्युत वितरण निगम लिमिटेड विद्युत भवन, जनपथ, ज्योति नगर, जयपुर अपने प्रबंध निदेशक के माध्यम से
2. मुख्य लेखा अधिकारी (आईए), जयपुर विद्युत वितरण निगम लिमिटेड, विद्युत भवन, जनपथ, ज्योति नगर, जयपुर

----प्रतिवादी

याचिकाकर्ता (ओं) के लिए : श्री जे आर चौधरी
प्रतिवादी (ओं) के लिए : श्री आलोक चतुर्वेदी

माननीय श्रीमान. जस्टिस अनूप कुमार ढांड

आदेश

14/08/2024

प्रकाशनीय

1. इस याचिका में कानूनी मुद्दा यह है कि "क्या परिवीक्षा पर नियमित रूप से नियुक्त व्यक्ति की सेवाएं उसे सुनवाई का अवसर दिए बिना समाप्त की जा सकती हैं, खासकर जब समाप्ति का आदेश सरल नहीं बल्कि दंडात्मक और कलंकपूर्ण हो"।
2. प्रतिवादियों द्वारा पारित दिनांक 19.05.2014 के आदेश से व्यथित होकर, जिसके तहत याचिकाकर्ता की सेवाएं समाप्त कर दी गई हैं, याचिकाकर्ता ने यह रिट याचिका दायर करके इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है।
3. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को प्रतिवादी-निगम के कार्यालय में कनिष्ठ लेखाकार (प्रोबेशनर ट्रेनी) के पद पर नियुक्त किया गया था। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (संक्षेप में, "1988 का अधिनियम") की धारा 7, 13 (1) (डी) और 13 (2) के तहत दंडनीय अपराधों के लिए उनके खिलाफ आपराधिक मामला संख्या 123/2014 दर्ज किया गया था और उसके बाद, उपरोक्त अपराधों के लिए उनके

खिलाफ न्यायालय में आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया था और केवल इसी आधार पर, याचिकाकर्ता को कोई नोटिस जारी किए बिना या सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना, प्रतिवादियों द्वारा याचिकाकर्ता की सेवाएं समाप्त कर दी गईं। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि यद्यपि याचिकाकर्ता नियमित रूप से नियुक्त था और परिवीक्षा अवधि में था, फिर भी आक्षेपित आदेश कलंकित करने वाला होगा, क्योंकि यह उसके भविष्य के करियर को प्रभावित करेगा। अतः इन परिस्थितियों में, दिनांक 19.05.2014 का विवादित आदेश कानून की दृष्टि में टिकने योग्य नहीं है तथा इसे रद्द किया जाना चाहिए।

4. अपने तर्कों के समर्थन में उन्होंने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा वी. पी. आहूजा बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य के मामले में पारित निर्णय पर भरोसा किया है, जो **2000 (2) एसएलआर (1)** में रिपोर्ट किया गया है।

5. प्रतिवादी के विद्वान वकील ने याचिकाकर्ता के वकील द्वारा उठाए गए तर्कों का विरोध किया और कहा कि याचिकाकर्ता नियमित रूप से नियुक्त था और परिवीक्षा पर था और उसकी नियुक्ति आदेश की शर्तों के अनुसार, उसकी सेवाओं को किसी भी प्रकार का नोटिस और/या मुआवजा दिए बिना समाप्त किया जा सकता था, यदि किसी भी प्रकार का कदाचार, उसके द्वारा प्रथम दृष्टया किया गया पाया जाता है। वकील ने कहा कि 1988 के अधिनियम की धारा 7, 13 (1) (डी) और 13 (2) के तहत दंडनीय अपराधों के लिए उसके खिलाफ आपराधिक मामला दर्ज करना गंभीर कदाचार है। इसलिए, इन परिस्थितियों में, कोई भी नोटिस जारी किए बिना या उसे सुनवाई का कोई अवसर प्रदान किए बिना, नियुक्ति आदेश की शर्त संख्या 4 के आलोक में याचिकाकर्ता की सेवाएं समाप्त कर दी गईं। वकील ने कहा कि याचिकाकर्ता ने उक्त शर्त संख्या 4 की वैधता को चुनौती नहीं दी है

6. बार में प्रस्तुत किए गए तर्कों को सुना और उन पर विचार किया तथा रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

7. विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या आक्षेपित आदेश कलंकात्मक है या नहीं?

8. दिनांक 19.05.2014 के आरोपित आदेश के अवलोकन से पता चलता है कि इसमें आपराधिक मामला संख्या 123/2014 का विशेष संदर्भ दिया गया है, जो याचिकाकर्ता के विरुद्ध भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो, जयपुर (संक्षेप में, "एसीबी") द्वारा 1988 के अधिनियम की धारा 7 और 13(1)(डी) और 13(2) के तहत दर्ज किया गया था, जब वह प्रोबेशनर प्रशिक्षु के रूप में कनिष्ठ

लेखाकार के पद पर काम कर रहा था और 19.03.2014 को रिश्तत लेते हुए एसीबी द्वारा रंगे हाथों पकड़ा गया था। उसके विरुद्ध उपरोक्त एफआईआर दर्ज करने के आधार पर उसे निलंबित कर दिया गया तथा कानूनी राय प्राप्त करने के बाद उसकी सेवाएं 19.03.2014 से समाप्त कर दी गईं, यह मानते हुए कि याचिकाकर्ता द्वारा परिवीक्षा प्रशिक्षु अवधि के दौरान गंभीर कदाचार किया गया है तथा उसके नियुक्ति आदेश की शर्त संख्या 4 के मद्देनजर उसे समाप्त कर दिया गया है।

9. प्रतिवादियों द्वारा पारित विवादित आदेश में प्रयुक्त उपरोक्त भाषा को देखते हुए, याचिकाकर्ता की सेवाओं को समाप्त करना, उनकी नियुक्ति आदेश की शर्त संख्या 4 के अनुसार उनके द्वारा किए गए कथित कदाचार के कारण पाया गया है। विवादित आदेश में प्रतिवादियों की ऐसी टिप्पणियाँ दंडात्मक प्रकृति की हैं।

10. यह स्थापित कानून है कि अस्थायी कर्मचारी की तरह, परिवीक्षाधीन भी कुछ संरक्षणों का हकदार है और उसके द्वारा लगाए गए कदाचार के आरोपों की उचित जांच किए बिना कोई कलंकपूर्ण आदेश पारित करके उसकी सेवाएं समाप्त नहीं की जा सकती हैं और ऐसे कर्मचारी को कोई अवसर दिए बिना पारित किया गया ऐसा कोई भी आदेश प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होगा।

11. दीप्ति प्रकाश बनर्जी बनाम सत्येंद्र नाथ बोस राष्ट्रीय मूलभूत विज्ञान केंद्र, कलकत्ता, **(1999) 3 एससीसी 60** के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस मुद्दे पर विचार करते हुए कि किन परिस्थितियों में एक परिवीक्षाधीन व्यक्ति की सेवाओं की समाप्ति को कदाचार पर आधारित कहा जा सकता है और किन परिस्थितियों में यह कहा जा सकता है कि आरोप केवल एक मकसद थे, यह माना कि यदि कदाचार के संबंध में किसी जांच में निष्कर्ष अधिकारी की पीठ पीछे या नियमित विभागीय जांच के बिना प्राप्त हुए हैं, तो बर्खास्तगी के साधारण आदेश को आरोपों पर आधारित माना जाएगा और यह गलत होगा। लेकिन अगर जांच नहीं की गई और कोई निष्कर्ष नहीं निकला और नियोजित जांच करने के लिए इच्छुक नहीं था, लेकिन साथ ही, वह उस कर्मचारी को जारी नहीं रखना चाहता था जिसके खिलाफ शिकायतें थीं, तो यह केवल मकसद का मामला होगा और आदेश गलत नहीं होगा। न्यायालय ने कहा कि यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा परिवीक्षाधीन व्यक्ति की सेवा समाप्ति के आदेश में प्रयुक्त भाषा या शब्दों पर निर्भर करता है कि वे शब्द कलंक के समान हैं या नहीं।

12. वी. पी. आहूजा बनाम पंजाब राज्य मामले में, जो **2000 (3) एससीसी 2939** में रिपोर्ट किया गया था, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दीप्ति प्रकाश बनर्जी बनाम सत्येंद्र नाथ बोस मामले में, जो **1999 (3) एससीसी 60** में रिपोर्ट किया गया था, पर भरोसा करते हुए माना कि एक अस्थायी कर्मचारी की तरह एक परिवीक्षाधीन भी कुछ सुरक्षा का हकदार है और उसकी सेवाओं को मनमाने ढंग से समाप्त नहीं किया जा सकता है, न ही उन सेवाओं को प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन किए बिना दंडात्मक तरीके से समाप्त किया जा सकता है।

13. नरसिंह पाल बनाम भारत संघ मामले में **2000 (3) एससीसी 588** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि यदि कोई आदेश दंड के रूप में पारित किया गया है और दंडात्मक प्रकृति का है, तो प्रतिवादियों का कर्तव्य है कि वे नियमित विभागीय जांच करें और वे कर्मचारी को छंटनी मुआवजा देकर मनमाने ढंग से सेवाएं समाप्त नहीं कर सकते थे।

14. भारत संघ बनाम महावीर सिंघवी ने **2010 (8) एससीसी 220** में रिपोर्ट दी थी कि, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पहले के निर्णयों द्वारा पहले से तय कानून पर चर्चा करते हुए कहा था कि यदि किसी परिवीक्षाधीन व्यक्ति के खिलाफ लगाए गए आरोपों के आधार पर उसकी पीठ पीछे कोई निष्कर्ष निकाला जाता है और वही आरोप आरोपमुक्ति के आदेश का आधार बनता है तो वह गलत होगा और उसे रद्द किया जाना चाहिए।

15. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दीप्ति प्रकाश बनर्जी (सुप्रा) मामले में निम्नानुसार निर्णय दिया है:—

“कलंक की मात्रा क्या है, इस पर कमल किशोर लक्ष्मण बनाम पैन अमेरिकन वर्ल्ड एयरवेज, (1987) 1 एससीसी 146: (1987) 1 एलएलजे 107 एससी में विचार किया गया है।

इस न्यायालय ने “कलंक” का अर्थ इस प्रकार समझाया (पं. 50):

वेबस्टर की न्यू वर्ल्ड डिक्शनरी के अनुसार, यह (कलंक) एक ऐसी चीज़ है जो किसी व्यक्ति के चरित्र या प्रतिष्ठा को धूमिल करती है, एक चिह्न, चिन्ह आदि, जो यह दर्शाता है कि किसी चीज़ को सामान्य या मानक नहीं माना जाता है। बर्टन द्वारा लिखित “लीगल थिसुरस” में इस शब्द का अर्थ कलंक, दोष, कलंक, बदनामी, लांछन, अपमान या शर्म का चिह्न बताया गया है। वेबस्टर की थर्ड न्यू इंटरनेशनल डिक्शनरी में इसका अर्थ एक चिह्न या लेबल दिया गया है जो किसी मानक से विचलन का संकेत देता है। एक अन्य शब्दकोश के अनुसार, “कलंक” नैतिक निन्दा का विषय है।”

16. इसी प्रकार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने रवींद्र कुमार मिश्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य हथकरघा निगम लिमिटेड (सप्लीमेंट्री) एससीसी 739, 1987 के मामले में, एक अस्थायी कर्मचारी की बर्खास्तगी के मामले में, उद्देश्य और आधार की कसौटी पर खरा उतरते हुए, साधारण बर्खास्तगी और दंडात्मक बर्खास्तगी के बीच अंतर किया। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उक्त अंतर को स्पष्ट किया और निम्नलिखित टिप्पणी की:

“6. जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं, यद्यपि संविधान के अनुच्छेद 311(2) के प्रावधान लागू नहीं होते, सेवा नियम, जो लगभग समतुल्य हैं, वर्तमान अपील के निपटारे में इस न्यायालय के निर्णयों को प्रासंगिक बनाते हैं। इस न्यायालय के कई आधिकारिक निर्णयों में, सेवा समाप्ति के आदेश के प्रभाव का पता लगाने के लिए "उद्देश्य" और "आधार" की अवधारणा को सामने लाया गया है। यदि अस्थायी सेवा में कार्यरत अधिकारी की लापरवाही को सेवा समाप्ति का प्रमुख उद्देश्य माना जाता है, तो आदेश को दंडात्मक नहीं माना जाता, जबकि यदि सेवा समाप्ति का आदेश इसी पर आधारित है, तो सेवा समाप्ति को दंडात्मक कार्यवाई माना जाता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि प्रत्येक नियोक्ता के लिए अस्थायी पदधारी की सेवा का मूल्यांकन करना आवश्यक है ताकि यह पता लगाया जा सके कि उसे उसकी नियुक्ति में स्थायी किया जाना चाहिए या उसकी सेवाएँ समाप्त कर दी जानी चाहिए। यह भी पता लगाना आवश्यक हो सकता है कि क्या अधिकारी पर कुछ और समय के लिए अस्थायी आधार पर मुकदमा चलाया जाना चाहिए। चूंकि अस्थायी कर्मचारी या उच्च पद पर कार्यरत स्थानापन्न कर्मचारी, दोनों के संबंध में ऐसा मूल्यांकन केवल इसलिए आवश्यक होगा क्योंकि यदि उपयुक्त प्राधिकारी मूल्यांकन करने के लिए आगे बढ़ता है और अपने विचारों का अभिलेख छोड़ जाता है, तो वह अभिलेख उपलब्ध नहीं होगा जिसका उपयोग ऐसे मूल्यांकन के बाद सेवा समाप्ति के आदेश को दंडात्मक स्वरूप देने के लिए किया जा सके। हमारे जैसे विशाल लोकतंत्र में, प्रशासन अवैयक्तिक होना ही चाहिए और सरकारी या सार्वजनिक निगमों में कार्यरत सरकारी अधिकारियों के संबंध में, अभिलेख के प्रयोजनों के लिए मूल्यांकन लिखित रूप में होना चाहिए। हमें नहीं लगता कि अपीलकर्ता के इस तर्क में कोई औचित्य है कि एक बार ऐसा मूल्यांकन दर्ज हो जाने के बाद, उसके तुरंत बाद जारी किया गया सेवा समाप्ति का आदेश दंडात्मक स्वरूप ले लेगा।”

17. इसी संदर्भ में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पवनेंद्र नारायण वर्मा बनाम संजय गांधी पीजीआई ऑफ मेडिकल साइंसेज एवं अन्य, 2002 (1) एससीसी 520 में परिवीक्षाधीन व्यक्ति की सेवा समाप्ति के मामले में इसी सिद्धांत को दोहराया है। यह इस प्रकार कहा गया है:

“29. हमारे सामने मामले के तथ्यों पर विचार करने से पहले, पहले परीक्षण से संबंधित एक और, प्रतीत होता है कि दुष्कर, क्षेत्र को स्पष्ट करने की आवश्यकता है अर्थात् समाप्ति आदेश में कौन सी भाषा कलंक के बराबर होगी? सामान्यतया, जब किसी परिवीक्षाधीन व्यक्ति की नियुक्ति समाप्त की जाती है तो इसका मतलब है कि परिवीक्षाधीन व्यक्ति नौकरी के लिए अयोग्य है, चाहे वह कदाचार या अयोग्यता

के कारण हो, समाप्ति आदेश में प्रयुक्त भाषा चाहे जो भी हो। हालांकि सख्ती से कहा जाए तो, समाप्ति में कलंक अंतर्निहित है, एक साधारण समाप्ति कलंक नहीं है। एक समाप्ति आदेश जो स्पष्ट रूप से बताता है कि परिवीक्षाधीन व्यक्ति की नियुक्ति की समाप्ति के प्रत्येक आदेश में क्या निहित है, वह भी कलंक नहीं है। पक्षों द्वारा उद्धृत और हमारे द्वारा पहले नोट किए गए निर्णय भी ऐसा नहीं मानते हैं। कलंक के बराबर होने के लिए, आदेश ऐसी भाषा में होना चाहिए जो नौकरी के लिए केवल अनुपयुक्तता से परे कुछ और आरोपित करे।”

18. इसी तरह के मुद्दे पर विभिन्न घोषणाओं पर विचार करने के बाद, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पंजाब राज्य बनाम सुखविंदर सिंह के मामले में **2005 (5) एससीसी 569** के पैरा 20 में इस प्रकार टिप्पणी की:

“20. वर्तमान मामले में न तो कोई औपचारिक विभागीय जाँच हुई और न ही कोई प्रारंभिक तथ्यान्वेषी जाँच हुई और केवल बर्खास्तगी का आदेश पारित किया गया। उच्च न्यायालय ने लिखित बयान में दिए गए इस कथन के आधार पर एक ढाँचा तैयार किया है कि प्रतिवादी अपनी छोटी सी सेवा अवधि के दौरान आदतन अनुपस्थित रहा था और इस आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक के मन में उसकी झूठी से अनुपस्थिति के कारण ही यह बात आई कि झूठी से अनुपस्थिति एक कदाचार है। उच्च न्यायालय ने आगे यह भी माना है कि प्रतिवादी की सेवा से बर्खास्तगी के आदेश और उसकी झूठी से अनुपस्थिति के बीच सीधा संबंध है और इसलिए, उसे सेवा से बर्खास्त करने के आदेश को दंडात्मक प्रकृति का माना जाएगा और नियम 16.24 के तहत नियमित जाँच की आवश्यकता होगी। हमारा मत है कि उच्च न्यायालय यह निष्कर्ष निकालने में पूरी तरह से गलत है कि 16-3-1990 का बर्खास्तगी आदेश वास्तव में कदाचार पर आधारित था और इसलिए दंडात्मक प्रकृति का था, जबकि इससे पहले एक नियमित विभागीय जाँच होनी चाहिए थी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रतिवादी आठ महीने पहले नियुक्त होने के बाद परिवीक्षा पर था। जैसा कि अजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य (1983) 2 एससीसी 217: 1983 एससीसी (एल एंड एस) 303 में देखा गया है, परिवीक्षा की अवधि नियुक्ता को नौकर के काम, क्षमता, दक्षता, ईमानदारी और योग्यता को देखने का समय और अवसर देती है और यदि वह पद के लिए उपयुक्त नहीं पाया जाता है, तो मालिक निर्धारित अवधि के दौरान या उसके अंत में बिना किसी और चीज के उसे सेवा से मुक्त करने का अधिकार सुरक्षित रखता है, जिसे परिवीक्षा की अवधि के रूप में जाना जाता है। जहां किसी कर्मचारी से स्पष्टीकरण मांगा जाता है, वहां केवल प्रारंभिक जांच करने से सेवा से मुक्ति या सेवा समाप्ति का अन्यथा हानिरहित आदेश दंडात्मक प्रकृति का नहीं हो जाता। इसलिए, उच्च न्यायालय यह मानने में स्पष्ट रूप से गलत था कि प्रतिवादी की झूठी से अनुपस्थिति आदेश का आधार थी, जिसके लिए नियमों के नियम 16.24 (ix) के तहत जांच आवश्यक थी।

19. उक्त निर्णय का अनुसरण माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पंजाब राज्य बनाम अवतार सिंह के मामले में **2008 (7) एससीसी 405** में किया गया है और उक्त निर्णय के पैरा 11 में इस प्रकार टिप्पणी की गई है:

“11. हमने पक्षों के विद्वान वकील को सुना है। हम पंजाब राज्य के विद्वान वकील की इस दलील से पूरी तरह सहमत हैं कि इस मामले में शामिल विवाद अब बरकरार नहीं है। प्रतिवादी की ओर से पेश हुए विद्वान वकील ने हमारा ध्यान इस न्यायालय के दो न्यायाधीशों की पीठ के पृथीपाल सिंह बनाम पंजाब राज्य [(2002) 10 एससीसी 133: 2003 एससीसी (एल एंड एस) 103] के फैसले की ओर दिलाया। न्यायालय ने कहा कि एक बार कलंक लग जाए तो सिद्धांत अच्छी तरह स्थापित हो जाता है, कोई भी आदेश पारित करने से पहले एक अवसर दिया जाना चाहिए। यहां तक कि जहां डिस्चार्ज का आदेश हानिरहित लगता है, लेकिन करीब से जांच करने पर, पर्दे के पीछे देखकर अगर कदाचार की कोई सामग्री मौजूद है और जो डिस्चार्ज के आदेश को पारित करने का आधार है, या ऐसा उचित रूप से अनुमान लगाया जा सकता है, तो इसमें कोई संदेह की गुंजाइश नहीं है कि कोई भी परिणामी आदेश, यहां तक कि डिस्चार्ज का भी, कलंक के रूप में समझा जाएगा। सुखविंदर सिंह [(2005) 5 एससीसी 569: 2005 एससीसी (एल एंड एस) 705] तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिया गया था और 2005 के उस निर्णय के मद्देनजर, इस न्यायालय के लिए कोई अलग दृष्टिकोण अपनाने की गुंजाइश नहीं है। हम उक्त निर्णय से पूरी तरह बाध्य हैं।”

20. विभिन्न निर्णयों द्वारा स्थापित कानून की स्थिति की पृष्ठभूमि में, यह सुरक्षित रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बर्खास्तगी आदेश की प्रकृति, चाहे वह सरल हो या दंडात्मक, और यह भी कि आदेश में उल्लिखित आरोप आदेश का आधार हैं या केवल उद्देश्य, का निर्णय आदेश की विषयवस्तु और मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों के आधार पर किया जाना चाहिए। निस्संदेह, यदि किसी कर्मचारी द्वारा कदाचार के आरोप आदेश का आधार हैं, तो आदेश को कलंकपूर्ण और दंडात्मक माना जाएगा।

21. जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध आपराधिक मामला दर्ज होने के आधार पर, इस तथ्य को याचिकाकर्ता की ओर से कदाचार मानते हुए, यह देखते हुए कि उसे रिश्वत लेते रंगे हाथों पकड़ा गया है, उसकी सेवाएँ समाप्त कर दी गई हैं। यह आदेश सरल नहीं, बल्कि दंडात्मक और कलंकपूर्ण है और इसे याचिकाकर्ता को सुनवाई का अवसर दिए बिना पारित नहीं किया जा सकता है, इसलिए, याचिकाकर्ता की सेवाएँ समाप्त करने का आदेश, जो प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करके पारित किया गया है, रद्द किए जाने योग्य है।

22. तदनुसार, रिट याचिका स्वीकार की जाती है। दिनांक 19.05.2014 का विवादित आदेश निरस्त किया जाता है।

23. इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त होने की तिथि से तीन माह के भीतर याचिकाकर्ता को सुनवाई का उचित अवसर प्रदान करने के पश्चात, मामला प्रतिवादियों को पुनः आदेश पारित करने के लिए वापस भेजा जाता है।

24. स्थगन आवेदन और सभी लंबित आवेदन, यदि कोई हों, का भी निपटारा किया जाता है।

(अनूप कुमार ढांड), जे

आयुष शर्मा /122

अस्वीकरण: इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेज़ी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।



अधिवक्ता अविनाश चौधरी